धर्म जीवन

जुलाई 2007

देव प्रभावों की सुगन्ध

साथी सेवकों का सम्बन्ध

श्रीमान निर्मल सिंह जी

श्रीमान साधु जानकी दास जी

श्रीमान डा. एच. वी. सोनपार

देव प्रभावों की सुगन्ध

उच्च लोक वासी श्रीमान प्रेमबल जी खेड़ा के जीवन की कुछ झलकियां।

1) भगवान् देवात्मा ने उन्हे अपनी गोद में बिठाकर उनका नामकरण किया था।

- (श्रीमान अमरनाथ जी)

2) खेड़ा साहब उन सौभाग्यवान जनों में से थे कि जिन्होंने 16 - 17 वर्ष तक पूजनीय भगवान के साक्षात दर्शन किए थे। - (श्रीमान बलदेव सिंह जी)

3) उनका जीवन त्याग, तप और सेवा का जीवन था। लाहौर में जो '' यंग मैन एसोसियशन'' बनी थी, उसमें वह बड़े उत्साह से काम करते थे।

- (श्रीमान के. एल. वोहरा जी)

4) देव समाज के लिए करोड़ों की प्रापर्टी बनाई परन्तु अपने लिए एक मकान भी नहीं बनाया।

- (श्रीमान एल. डी. गुप्ता जी)

5) उनका जीवन बहुत अनुशासित था। भगवान की शिक्षा पर उनकी गाढ़ श्रद्धा थी। उनके श्रद्धेय पिता जी ने समाज के काम के लिए विरोधियों की लाठियां खाई थी।

- (श्रीमान विजय कुमार जी अग्निहोत्री)

6) उनका समूचा जीवन ही देवसमाज की भेंट था। वह अम्बाला शहर में देवसमाज शिक्षा संस्थाओं के संस्थापक, प्राचार्य, संचालक एवं संरक्षक थे। उनका जीवन सादगी से भरपूर था। रूडकी युनिवर्सिटी की लायब्रेरी में नंगें पांव प्रवेश करके आपने भूमि पर लेटकर पूजनीय भगवान की छवि को प्रणाम किया।

- (श्रीमान किशनसिंह चौहान)

7) स्त्रियों के सम्बन्ध में आपने बहुत पवित्र और सराहनीय जीवन व्यतीत किया है।

- (श्रीमान गुरूसेवक सिंह जी)

8) फरीदाबाद की जमीन रिलीज़ कराने में आपने शुरू से ही सहयोग दिया है। मिनिस्टरों से मिले हैं। उसके लिए मैं आपको बहुत धन्यवाद देता हूँ।

- (श्रीमान विकास देव जी)

9) श्रीमान प्रेमबल खेड़ा ने अम्बाला में कन्याओं के स्कूल कॉलिज स्थापन किए और एक ऋषि की तरह पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए 40 वर्ष तपस्या करके इन संस्थाओं को बुलंदियों तक पहुंचाया।

- (श्रीमान गिरवर प्रसाद जी)

10) उनका जीवन एक आश्रमवासी के जीवन जैसा था। कठोर अनुशासन नियमों का पालन, देव समाज की शिक्षाओं में हार्दिक आस्था, व हंसमुखपन मैनें उनमें देखा था।

- (श्रीमती डॉ. पुष्पा बंसल)

11) इसमें कोई संदेह नहीं कि श्रीमान प्रेमबल जी देवसमाज की शिक्षा के इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड़ गए हैं। वह इन संस्थाओं द्वारा होने वाली कन्याओं की सेवा से सदैव जीवित रहेंगें।

- (श्रीमान एस. पी. कनल जी)

12) कितना अपनापन था आपमें कि आप सभी से 'पापा जी' कहलाने के अधिकारी बने। आपका नाम ही कितना सुन्दर था दोनों शब्द आपमें सार्थक थे। बेहद प्रेम था आपमें। बेहद बल था आपमें।

- (श्रीमान नवनीत जी अरोरा)

13) उनके व्यक्तित्व में पवित्रता अनुशासन, स्वार्थहीनता और त्याग, समाज सेवा व सुधार, भरपूर समर्पण के गुण थे जो उन्होंने अपने गुरू से ग्रहण किए थे। उन्हों ने लोगों की तन, मन, धन से सेवा की।

- (श्री पी. एल. आनन्द) *रिटायर्ड प्रिंसीपल*

धर्म जीवन

खण्ड 19 अंक 7
जुलाई 2007
वार्षिक मूल्य 50 रूपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

साथी सेवकों का सम्बन्ध

गुरु महाराज ने साथी सेवकों के परस्पर सम्बन्ध के विषय में अपनी अद्वितीय ज्योति की लक्ष्मण रेखा इस प्रकार खीचीं :- **"जो आत्मा जहां तक गाढ़-रूप से मेरे साथ जुड़ा हुआ है, वहां तक उसके लिये आवश्यक है कि वह कुल ऐसे जनों को जो मेरे साथ जुड़े हैं, और जिन पर जहां तक मेरा अधिकार हो चुका है, सन्मान व प्यार की दृष्टि से देखें और अपने को उनका और उनको अपना समझे। परन्तु यदि किसी की यह गति नहीं, वह मेरा नहीं हो सकता।"**

जिस प्रकार बहन भाईयों के अन्दर एक माता पिता का, एक गोद का, एक खून का और एक मां के दूध का सांझा सूत्र होता है; जो उन्हें एक दूसरे के साथ जोड़ने के लिए, एक दूसरे का होने के लिए और एक दूसरे के दुःख का भागीदार होने के लिये प्रेरित करता और मजबूर करता है, उसी प्रकार साथी-सेवकों के भीतर भी एक अद्वितीय देवात्मा गुरु का, एक अद्वितीय शिक्षा का, एक ही नीचता से निकलने और उच्च जीवन पाने के मनोरथ का और उच्च परिवर्तनकारी एक अद्वितीय देव प्रभावों का, अर्थात् देव ज्योति और देव तेज की पवित्र सांझ के सूत्र का रिश्ता है। प्रत्येक सेवक के भीतर पूजनीय भगवान् की विलक्षण देव ज्योति पहुंचती है, प्रत्येक सेवक के भीतर उन के देव तेज का अमल होता है। गुरु महाराज की ज्योति और देव तेज को ग्रहण करके ही कोई जीवन परिवर्तित होता है, कोई आत्मा सेवक बनने के लिए तैयार होता है और बनता है। प्रत्येक सेवक में गुरु महाराज के देव रूप का कुछ न कुछ अंश वर्तमान होता है, देवात्मा के देव प्रभावों की गहरी छाप होती है। देवात्मा का विशेष कार्य वर्तमान होता है। देवात्मा के देव प्रभावों की छाप होती है। देवात्मा का धर्म-रूप जहां तक आत्मा में प्रवेश करता है, वह तकाजा करता है कि देव रूप से प्राप्त उस अंश को प्रत्येक सेवक सत्कार, स्नेह, सद्भाव, सम्मान और श्रद्धा की आंखों से देखे। उस अंश को गुरु की तरह अपना समझे, अपने आपको उस गुरु अंश का, जो प्रत्येक सेवक के भीतर उच्च परिवर्तन के रूप में, देव प्रभावों के रूप में बैठा है समझे। जो ऐसा नहीं करता वह देवात्मा के रूप को ही अपमान की टांग मारता है। वह देवात्मा का नहीं हो सकता, जिसका दिल देवात्मा के प्रभावों के कार्य के आगे नहीं झुकता और अश-अश नहीं करता, जिसकी

श्रद्धा इस खुराक से तृप्त नहीं होती, वह न किसी सेवक के लिए सगा है और न देवात्मा को ही कुछ समझता है। वह केवल और केवल अपने नीच-भावों का सगा है। देवात्मा सत्गुरु का होने के लिए, उनके देव प्रभावों से प्रभावित होने के लिए, देवात्मा की शरण के अद्वितीय अधिकार को सफल करने के लिए सब साथी सेवकों का हो जाना आवश्यक है। जो साथी सेवकों से सम्बन्ध अनुभव नहीं कर सकता, वह आत्मा देवात्मा का भी नहीं हो सकता।

साथी सेवक एक पेड़ के ही फल और पत्ते हैं, उन की रूह के रग रेशे में एक ही पेड़ का जीवन रस प्रवाहित है। इसलिये वह एक दूसरे के बेहद निकटवर्ती और अपने हैं। परस्पर स्नेह और सत्कार के पात्र हैं।

सेवकी का महा अधिकार कब प्राप्त होता है? सेवकी के ताज का कोई मनुष्य कब अधिकारी होता है? जब :-

(1) कोई आत्मा मिथ्या गुरु, मिथ्या देवी देवताओं को त्याग करके सत्य उपास्य देवात्मा का विश्वासी बनता है।

(2) जब कोई सौभाग्यवान् आत्मा अपने जीवन में आठ मोटे-मोटे पापों से विरत होने और सारी उमर विरत रहने का चाहवान हो जाता है।

उपरोक्त सत्य और शुभ की मूल शर्तों को पूरा करके कोई मनुष्य देवात्मा के सेवक मण्डल में शामिल हो जाता है। इस प्रकार जब तक वह शर्तें पूरी रखता है, वह सारे सेवक दल के स्नेह, सम्मान, सुझाव और प्यार का अधिकारी बन जाता है।

मनुष्यात्मा अधूरी गठन रखता है। प्रत्येक मनुष्य में कमियां हैं, उसकी गठन दोषपूर्ण है। फिर सेवक भी इस नियम से बाहर नहीं। उनसे भी समय-समय पर अवज्ञाएं होंगी। बड़ी से बड़ी गल्तियां करके भी उपरोक्त दो शर्तें पूरी करके एक एक सेवक सन्मान और स्नेह का पात्र है। सेवक होना गल्तियों की तुलना में अधिक वज़नदार है। उसकी गल्तियां दर गुजर करना, प्यार और हमदर्दी से उनको सुधारना, परन्तु उसको अपना ही जानना, प्रत्येक मनुष्य का फर्ज़ है।

उपरोक्त दोनों शर्तों अर्थात् मिथ्या और मोटे-मोटे पापों से विरत रहने वाला व्यक्ति किसी सेवक या सेवकों के समूह का शत्रु नहीं हो सकता। किसी मिथ्या और पाप से रहित व्यक्ति से गुरु दर की थोड़ी बहुत सेवा करने वाले को विरोधी, शत्रु गैर देखना किसी दोषपूर्ण सोच का ही काम हो सकता है। सेहत मन्द सोच ऐसी चिन्ता भी नहीं कर सकता।

प्रत्येक सेवक बड़ा या छोटा सत्कार के कैसे योग्य है, यह हमें फरिशता तहसीलदार सरदार सावन सिंह जी की वह घटना बता सकती है, जिस प्रकार उन्होंने कचहरी का काम छोड़कर, कहलाने वाले अछूत-जाति के सेवक की परिक्रमा की और कहा, "जिथे मिले गुरु सिखड़ा झुक-झुक लागू पाए।" यह तो साथी सेवकों के प्रति सत्कार का आदर्श है। जो साथी सेवकों को स्नेह, प्यार और सन्मान नहीं दे सकता, अपनत्व नहीं दे सकता, वह गुरु की निकटता भी हासिल नहीं कर सकता।

धर्म की दुनिया में सेवकों का दर्जा दूसरे दर्जे पर है, पहला दर्जा गुरु महाराज का है। सेवकों के द्वारा ही गुरु की ज्योति हम तक पहुंची है, इसलिए वह हमारे उपकारी और हितकारी हैं, बहुत ही कीमती है।

"सबसे से बढ़कर वह सम्बन्धी, उच्च जीवन जो देवें दान।" साथी-सेवक इसलिए भी उपकारी हैं कि वह बुनियादी पत्थर बन कर काम आए हैं। उन्होंने बड़े-बड़े त्याग और समर्पण करके गुरुदान के प्रवाह को जारी रखा है और आगे पहुंचाया है। कईयों ने टी. बी. लगवा ली और जल्दी इस दुनिया से कूच कर गए, परन्तु गुरु की जलाई शमा को रोशन रखा। कईयों

ने पूजनीय भगवान की पवित्र जात की सेवा करके जीवन सफल कर लिया। कईयों ने डिब्बा दान मांगा, किसी ने स्त्री हो कर सुबह बच्ची का देहान्त हुआ, तो उसी शाम को दान मांगा, गुरु की रिक्शा खीचीं, उच्च से उच्च परिवर्तन पैदा किए, कईयों ने उच्च लेखों और पुस्तकों का खजाना दिया। कई उच्च, भरोसे योग्य, कुर्बानी और वफा की ठोस मिसाल बने। कईयों ने ज़मीनें और मुरब्बे दान में दिए। कईयों ने समाज की सम्पति को बढ़ाया। कईयों ने अनोखे गीत लिखे, कईयों ने श्रद्धा - भाव से भरकर गीतों का गान किया। कईयों ने स्त्रियों, कईयों ने पुरुषों की शिक्षा व्रत धारण किया। कईयों ने संस्थाएं कायम कीं और उन्नत कीं। कईयों ने पुरुष होकर पर पुत्रियों की रक्षा करके गुरु गौरव को बढ़ाया। कईयों ने प्रतिज्ञा - पालन, ईमानदारी - पवित्रता के अनोखे दृष्टान्त पैदा किए। कईयों ने उच्च साधन और आत्म चिन्तन के साधन के रिकार्ड कायम किए। उक्त उच्च जीवन का खमीर पैदा हुआ, जिस से मरती हुई आत्माएं बचीं। ऐसे साथी सेवकों का होना हमारे लिए एक तरफ फखर की बात है, दूसरी तरफ उनके लिए सत्कार और मुहब्बत भरे रहना हमारा पाक कर्त्तव्य भी है।

साथी सेवकों के साथ सम्बन्ध खराब करने वाले हमारे अपने भीतर के ही नीच भाव हैं। विशेष रूप से हमारा स्वार्थ, हमारा घमण्ड, नीच घृणा और मान सम्म्मान का अनुचित अधिकार आदि किसी भी उक्त नीच भाव पर चोट लगने से हमारे भीतर नीच घृणा पैदा होती है। इससे हम फट जाते हैं, मुँह मोड़ लेते हैं, दूरी पैदा होती है, शक्ल देखना नहीं चाहते, बात करना नहीं चाहते, दूसरों की वर्तमानता को सहन नहीं कर सकते।

गुरु महाराज (साथी सेवकों को) नीच घृणा करने के सम्बन्ध में अपनी ज्योति देते है :-

"किसी भी मनुष्य को चाहे वह तुम्हारे साथ कितना ही बुरा सलूक करे, घृणा कभी नहीं करनी चाहिए।"

"मनुष्य के शारीरिक - जीवन को जैसे संखिए आदि का ज़हर नष्ट कर देता है, उसी प्रकार आत्मा के जीवन को उसकी नीच घृणाओं का जहर नष्ट कर देता है।"

"नीच घृणा ज़हरे कातिल है। यह आत्मा का कुछ भी बनने नहीं देती। धर्म - अभिलाषी - जन के भीतर सहन शीलता की इतनी शक्ति आनी चाहिए कि वह दूसरों बुरा सलूक पाकर उससे फट न जाए; उल्टा उसका भला करना चाहिए, उसके लिए भी हमदर्दी का भाव पैदा हो तो ही दूसरे के हृदय पर असर होता है।"

साथी सेवकों को घृणा करना अधोगति है, महा अनर्थ, इससे बचने की अधिक से अधिक जरूरत है।

कर्मचारियों और प्रचारकों के परस्पर सम्बन्ध के विषय में पूजनीय भगवान् ने अपनी विशेष ज्योति में लक्ष्मण रेखा इस प्रकार खीचीं है :-

"जिन्होंने अपने आप को मेरे मिशन के लिए भेंट करके, मेरी खुशखबरी के प्रचार और आत्माओं के उद्धार और उन को मेरे साथ जोड़ने का व्रत लिया हो, उनके लिए यह विशेष रूप से आवश्यक है कि वह अपनी पुरानी, विकार भरी, अपवित्र अवस्था से पूर्ण मोक्ष लाभ करके इस बात का सबूत देवें कि वह मुझे अपनी कुल बात चीत और कुल चाल ढाल और बर्ताव के द्वारा सबसे बढ़कर स्थान देते हों और मेरे पीछे मेरे प्रचारकों को प्रेम करते हों और उनके साथ किसी प्रकार का द्वेष ईर्षा आदि न रखते हों और किसी को अपने से बेहतर और उन्नत होता देखकर कुढ़ते नहीं एवं खुश होते हों और अपने नाम या पद या आराम या

किसी और बात को सामने रखकर मिशन की सच्ची महिमा और उसके प्रबन्ध में कोई खराबी या विघ्न न पैदा करते हों।

उक्त देव वाणी में गुरु महाराज ने फरमाया है :-

(1) प्रचारकों और कर्मचारियों के लिए यह विशेष रूप से आवश्यक है कि वह अपनी-अपनी जन्म-जात नीच प्रकृति से मुक्त हो गए हों, विशेषकर ईर्षा, द्वेष वा नीच घृणा से बहुत ऊपर उठ गए हों।

(2) वह कुल प्रचारकों को जिन्होंने गुरु मिशन में जीवन भेंट किए हुए हैं, प्यार करते हों। जो साथी प्रचारकों को प्यार नहीं करता, वह गुरु का सम्मान नहीं करता।

(3) वह किसी प्रकार का द्वेष या ईर्ष्या भाव न रखते हों।

(4) किसी को किसी पहलू में बेहतर व्यवस्था में देखकर सड़ते-कुढ़ते न हों।

(5) वह अपने नाम पद, सुख स्वाद के इतने अनुरागी न हों कि उनकी खातिर वह साथी कर्मचारियों के मान, पद व अधिकार का ही अपहरण करने से न रुक सकते हों।

(6) ऐसी अवस्था रख कर कर्मचारी मिशन के इन्तजाम में बेहद खराबी पैदा करके बेपनाह हानि कर सकते हैं।

(7) श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी से महान कम ही कर्मचारी थे। उनसे प्राय: सब कर्मचारी नीचे थे। फिर भी वह ही कर्मचारी के कमरे के आगे जाकर सुबह के समय सिर रखकर प्रणाम करते थे। यह उनका उच्च रुहानी स्वस्थ-कर साधन था। उन्होंने किसी कर्मचारी को पछाड़ने या उसके अधिकार का अपहरण करने का कभी कोई संग्राम नहीं किया। वह उपरोक्त ईर्ष्या द्वेष से मुक्त थे। ईर्ष्या द्वेष के भाव रखकर कर्मचारी खाना जंगी का शिकार हुए बिना नहीं रह सकते। वह एक वा दूसरे दोष की आड़ के पीछे सारी समाज के गौरव, प्रबन्ध व कारज की महा-हानि किये बगैर नहीं रह सकते।

(8) साथी सेवकों का सम्बन्ध बहुत स्नेह व प्यार-मयी होना चाहिए। कर्मचारियों का सम्बन्ध जिस प्रकार परस्पर प्यार, श्रद्धा, कृतज्ञता व शुभकामना से भरा होना चाहिए, उसका अनुमान करना कठिन है।

(9) गुरु महाराज ने फरमाया है कि किसी को स्थान से स्थगित करने से पहले प्रबन्ध यह बता सकता हो कि उसने एक-एक सेवक की रक्षा के लिये क्या-क्या यत्न नहीं किये है। अगर कोई यत्न किये बगैर निष्कासित किया जाता है, तो यह मनुष्यात्मा की नीच भावनाओं की लीला है।

(10) "जब तुम किसी को निकालो, तो तहकीकात करके निकालो और यह नोट हो कि तुमने उसकी बेहतरी के लिए क्या-क्या यत्न किये हैं।"

देवात्मा

बगैर शुभ यत्न करने के किसी का निष्कासन आम करके नीच घृणा का ही प्रकाश है। आज कल चल रहे साथी सेवकों के सम्बन्ध में मुबारक पाठ विचार के दिनों में हमें अपने आपस के सम्बन्ध में अधिक से अधिक मिठास उत्पन्न करके एक दूसरे को मुहब्बत व प्यार की आंखों के साथ देखने की जरूरत है, जो ऐसा कर सकेगा, वह ही गुरु का होगा। जो ऐसा नहीं कर सकेगा। वह केवल अपने आप का ही होगा।

(एक सेवक)

श्रीमान निर्मल सिंह जी

1. **जहां का मोती था, वहां ही पिरोया गया –**

श्रीमान निर्मल सिंह जी देव समाज के एक विशेष कर्मचारी हुए हैं। उनका जीवन चरित्र बताता है कि इस पृथ्वी के भीतर ऐसे जन वर्तमान हैं, कि जिन को नेचर ने देवात्मा के लिए ही पैदा किया है, नहीं तो कहां तेरह चौदह साल का बालक, जो बचपन में ही कई पापों में ग्रस्त हो चुका था, इतफ़ाक से देव प्रभावदायक सभा में पहुंचता है, और इस कदर प्रभावित हो जाता है कि देव समाज का ही हो जाता है। हैरानी यह है कि यह तेरह चौदह साल का बालक मांस, शराब और चोरी के पापों में फंसता जाता था। और यह स्वपन देखता था कि जल्दी अपना इम्तहान पास करके नौकरी में लग जाऊं और रिश्वत से खूब पैसे कमा कर अच्छी जायदाद बनाऊं। यह छोटा सा लड़का चोरी ऐसी विधि से करता है कि हैरानी आती है। इसके बड़े भाई साहिब रुपये लाते हैं और जिस कपड़े में गांठ बांधे हुए वह रखते हैं, उस गांठ को खोल कर यह उसमें से कुछ रुपये निकाल लेता है और बाकी रुपयों की हल्की सी गांठ बांध देता है। उसके जाने के बाद जब भावजा वह कपड़ा उठाकर रुपये सम्भालने के लिए जाती है, तो कपड़ा उठाने पर वह गांठ खुलकर रुपये गिर जाते हैं। ज्योंही वह रुपये इकट्ठे करती है, त्योंही पता लगता है कि कुछ रुपये मिलते नहीं हैं। रुपये गुम कर देने का इलजाम भावजा पर आता है कि इन्होंने लापरवाही से कपड़ा उठाया और गांठ खुल जाने से रुपये गिर कर गुम हो गए।

इसी प्रकार उनका एक निकट का सम्बन्धी उनके घर आया। कुछ पौंड उसके पास थे। इस बालक ने इस रिश्तेदार का एक पौंड चुरा लिया। उस रिश्तेदार ने उस पर शक जाहिर किया, तब इन्होंने आंसू बहाने शुरू किए कि तुम मुझ को चोर बताते हो। घर सम्बन्धियों ने उस रिश्तेदार को ही बुरा भला कहा। इसी प्रकार स्कूल में दाखिल होकर और रहकर वहां भी चोरियां की, लेकिन ज्योंही एक बार फेरूशहर में अपनी बहन के घर गए, और वहां श्रीमान मास्टर वधावा राम जी की सभा में शामिल हुए, त्योंही उस छोटे बालक के हृदय ने पलटा खाया और उस भरी सभा में वह खड़े हो गए और मोटे-मोटे दस पाप छोड़ने की प्रतिज्ञा की। उनके एक नजदीकी रिश्तेदार ने उनकी इस प्रतिज्ञा को अच्छा नहीं समझा और कह भी दिया कि तुम पांच पाप ही छोड़ते, तुम ने दस पाप क्यों छोड़ दिए? तुमने तो दुनिया में कई काम करने हैं। तुम्हारा दस पाप छोड़ना तो उसमें विघ्नकारी प्रमाणिक होगा, लेकिन इस बालक ने एक न मानी।

इस परिवर्तन के बाद इस बालक के भीतर सत्संग का चाव-बढ़ गया। मौका पाकर वह सत्संग में शामिल हो जाते थे। धीरे-धीरे उनके जीवन में वह समय आया कि उन्होंने अपने गांव में सत्संग रखना शुरू किया। सत्संगों में जाने और उनको बुलाने से उनके हृदय में नयी बेचैनी पैदा हो गई। वह यह चाहने लगे कि मैं धर्म विकासालय में दाखिल हो जाऊं। उनकी इस निराली गति से उनके रिश्तेदार बड़े दुखी हुए और उन्होंने धमकी दी कि हम तुम्हारा खर्च बन्द कर देंगे। ज्यों-ज्यों मुखालिफत बढ़ती गई, त्यों-त्यों उनका उत्साह बढ़ता गया और उन्होंने यह कदम उठाने का दृढ़ निश्चय कर लिया कि पत्नी और बहन सहित में बठिंडा चला जाऊं। उनकी धर्म पत्नी श्रीमति जयकौर जी ने उनकी सहायता की। श्रीमान निर्मल सिंह जी और उनकी धर्म पत्नी का खर्च समाज पर पड़ता था और समाज के उस समय के हालात इस

बोझे को उठाने के लिए तैयार न थे, परन्तु इस बहादुर जोड़े ने इस मुश्किल को हल कर दिया। श्रीमति जयकौर जी ने बठिंडा में सामाजिक विद्यार्थियों का खाना बनाना स्वीकार किया और श्रीमान निर्मल सिंह जी दान एकत्र करने लग गये। और वह समाज को देते थे। इस प्रकार इन दोनों पति पत्नी का खर्च समाज ने स्वीकार कर लिया।

उनके हृदय के उच्च भाव ज्यों-ज्यों उन्नत होते गए। त्यों-त्यों वह नए-नए कदम उठाते गए। वह पढ़ाई त्याग कर धर्म विकासालय में दाखिल हो गए। धर्म विकासालय का कोर्स खत्म करने के बाद वह देव समाज के उम्मेदवार कर्मचारी बनाए गए। उस समय उनकी आयु 20-21 वर्ष की थी। फिर वह शीघ्र ही उपकर्मचारी बन गए। और आखिरी उमर तक देव समाज के कर्मचारी रहे। उनके जीवन में जो आत्म-शुद्धि के साधन शुरू हो गए, वह भी असाधारण थे। पर सेवा विषयक भाव, जो उनके भीतर पैदा हो गए। उन्होंने उनके जीवन को विशेष बना दिया और जानने वालों को यह कहने के लिए मजबूर कर दिया, कि "जहां का मोती था, वहीं पिरोया गया।" हम भी उनको सेवक माला का एक सुन्दर मोती समझते हैं।

2. भक्ति भाव का उच्छवास :

श्रीमान निर्मल सिंह जी भगवान देवात्मा के देव रूप की सुन्दरता पर बलिहार जाते थे। कई गीत बना कर निहायत ही उत्साह प्रदान करने वाले स्वर में गाते थे, और उससे जिस प्रकार का उच्च प्रभावशाली मंडल पैदा कर देते थे, उससे ऐसा प्रतीत होता था कि हम किसी और ही उच्च लोक में पहुंच गए हैं। जहां वह सत्संग ले जाते थे, वहां वह असाधारण रूप से कल्याणकारी बाह्यक और आन्तरिक मंडल पैदा कर देते थे। सौंदर्य का बोध भी किसी-किसी जन में होता है। परन्तु गंदे से गंदे मकान और मैले स्थान को रातों रात बदल कर निहायत सुन्दर उच्च प्रभावशाली रूप दे देना श्रीमान निर्मल सिंह जी का ही जादू था। वह एक बार डहरकी में सत्संग ले गए। डहरकी वालों ने एक मुसाफिरखाने में सतसंगियों को ठहराने का प्रबन्ध किया। यह मुसाफिरखाना बहुत मैला और गंदा मकान था। मैं हैरान था, कि ऐसे मैले स्थान में सत्संग की सभाएं कैसे होंगी। मैं शायद उस रात किसी और मकान में ठहरा था। ज्योंही दूसरे दिन प्रात: मैं वहां पहुंचा, तो मैं उस स्थान को पहचान न सका, कि क्या यह वही स्थान है? सेहन तो बहुत साफ था ही, परन्तु जिस कमरे में सत्संग की सभाएं होनी थीं, वह तो ऐसा मालूम होता था मानों कोई देवताओं का स्थान है। भगवान देवात्मा की छवि निहायत ही सुन्दर रूप में सुसज्जित थी। कई कमचारियों के फोटो बहुत सुन्दर रूप में लगे हुए थे। फर्श पर दरियां और चादरें बिछाई हुई थीं। इस कमरे में प्रवेश करने के साथ ही हृदय उच्च प्रभाव से भर गया। मुझे यह बताया गया कि श्रीमान निर्मल सिंह जी और उनके दो तीन साथी इस मैले स्थान को देव स्थान में बदलने में सारी रात लगे रहे हैं। फिर जब श्रीमान निर्मल सिंह जी ने सभा शुरू की तो यह मालूम नहीं होता था, कि इन्होंने रतजगा किया है। भक्ति भाव से भरकर जब उन्होंने भजन गाया तो उपस्थित जनों को किसी और ही लोक में पहुँचा दिया।

वह सारा दिन इस चिन्ता में रहते थे कि उपस्थित जन धर्म जीवन लाभ करें। और हम भगवान देवात्मा के देव रूप की महिमा और उनके कार्य की सुन्दरता के विचार में मस्त रहें।

इसके भिन्न मैंने एक-एक सत्संग के अवसर पर यह देखा कि वह दो या तीन बजे रात उठे और अपना साधन करने के बाद हारमोनियम बाजा उठाया और अपने सत्गुरु देवात्मा की महिमा के गीत गाते हुए

सेवकों के दर तक पहुंचे। और मधुर गान से उन्हें जगाया और प्रात:काल के साधन के लिए उनके दिलों को तैयार किया। इस प्रकार उनकी सेवकों के घरों की - परिक्रमा क्या सेवकों और क्या उनके परिवारों के लिए बहुत हितकर प्रमाणित होती थी। एक - एक समय वह सारी - सारी रात जागकर दूसरे गाँव सेवकों को तैयार कर आते थे कि कल से सत्संग शुरू हो जायेगा। यह बुलावा देकर फिर दिन चढ़ने से पहले ही सत्संग स्थान में पहुँच जाते थे और सुबह के नियत समय पर खुद ही साधन कराते थे। उनके इस भक्तिभाव और उत्साह के कारण एक - एक सत्संग जिस प्रकार कामयाब साबित होता था, उसका ब्यान नहीं हो सकता।

श्रीमान निर्मल सिंह जी इतने ज्ञानी नहीं थे - जितने कि वह भक्त थे। उन्होंने भक्ति - भाव से ही कई हृदयों को जीता। वह कोई लम्बा चौड़ा साधन नहीं कराते थे। ऐसे पत्रों का पाठ कर देते थे कि जिनमें उपकार स्मरण किया हुआ हो या गुण चिन्तन किया हुआ हो या हानि चिन्तन किया हुआ हो, या ऐसे पत्र हों, जो भगवान देवात्मा की महिमा से भरे हुए हों। पत्रों को पाठ करना भी उनको ही आता था। किसी - किसी पत्र के साथ यथायोग्य भजन का गान भी कर देते थे और ऐसा उच्च प्रभावदायक मंडल पैदा कर देते थे, कि लोग अश अश कर उठते थे। मैं यह प्रकाश करने के लिए अपने आपको मजबूर पाता हूँ कि वह एक - एक सत्संग को कामयाब बनाने के लिए जिस प्रकार अपनी नींद को, अपने सुख और आराम को, अपनी सेहत और अपनी अन्य आवश्यकताओं को त्याग कर देते थे, वह दृश्य हमें एक - एक बार फिकर में डाल देता था, कि उनका शरीर इस कदर संग्राम से कब तक मुकाबला कर सकेगा, परन्तु उनके उच्च भाव उनके ऐसे संग्राम और त्याग के लिए उन्हें हर समय तैयार रखते थे। जिस प्रकार मछली के लिए पानी है, और परिन्दों के लिए वायु है, और पशुओं और मनुष्यों के लिए हमारी भूमि है, उसी प्रकार श्रीमान निर्मल सिंह जी के लिए जान और प्राण या सच्चे सहारे की वस्तु देव प्रभाव थे।

3. देव प्रभावों के कार्य में दृढ़ विश्वास :-

श्रीमान निर्मल सिंह जी के भीतर यह दृढ़ विश्वास था कि आत्मिक रोगियों को आत्मिक रोगों से सत्य मोक्ष देने के लिए देव प्रभाव एक अकसीर दवा है।

(1) एक बार एक क्षेत्र में एक सौदे पर सेवकों का परस्पर बहुत अन्मेल हो गया। इस सौदे का अन्तिम निर्णय देव समाज की माननीय कौंसिल को करना पड़ा और कौंसिल ने इस मामले को पूजनीय भगवान तक पहुंचाया। भगवान देवात्मा ने वही फैसला देना था, जो न्याय - मूलक था। परन्तु शोक, जिनके विरुद्ध यह फैसला था, वह उलझन में पड़ गए और उन्होंने एक दूसरे को नीच घृणा करनी शुरू की। इन दोनों पार्टियों के बढ़ते हुए अन्मेल से यह प्रतीत होता था कि सारा क्षेत्र ही उजड़ जाएगा। श्रीमान निर्मल सिंह जी, जो उस क्षेत्र के परिचालक थे, उनका हृदय दुख से इस कदर भर गया कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता। उनका दलीलों में विश्वास नहीं था। उनका देव प्रभावों के कार्य में दृढ़ विश्वास था, कि इस उलझन को देव प्रभाव ही सुलझा सकते हैं। वह उस क्षेत्र में एक दो जनों को अपने साथ लेकर पहुँचे। दोनों पार्टियों के सेवकों को पता दिया गया कि कल प्रात: सभा होगी। कहा जाता है कि उस राम श्रीमान निर्मल सिंह जी बड़े बेचैन रहे। वह घंटों कामनाएं और प्रार्थनाएं करते रहे और भगवान देवात्मा के दरबार से देव प्रभावों का दान मांगते रहे। ज्यों ही सुबह साधन में जाकर और भगवान देवात्मा के देव रूप की महिमा को उपलब्ध करके

उन्होंने भजनों का गान आरम्भ किया, तब उनके व्याकुल हृदय की विशेष हालत ने और भक्ति भाव से गाए हुए भजनों ने सारे मंडल को इस कदर बदल दिया, कि एक जन जो सारी उलझन की जड़ थे - इतने प्रभावित हुए कि वह ढांए मार कर रोने लगे और जिनको दुखी किया था, उनके चरणों में सिर रखकर बिलबिला कर माफ़ी मांगने लगे। इस दृश्य को देखकर बाकी सब जनों के हृदय हिल गए और वह जन जो उलझन के जिम्मेवार थे, एक दूसरे से माफी मांगने लगे। वह दृश्य ऐसा स्वर्गीय और उच्च प्रभाव दायक था, कि जिसकी याद आज तक उपस्थित जन भूल नहीं सकते। देव प्रभावों के इस अनोखे करिश्मे ने सारा क्षेत्र बचा लिया।

(2) एक जन धर्म विकासालय में आता है। कई कारणों से उसका हृदय उलट पुलट हो जाता है। श्रीमान् निर्मल सिंह जी उन दिनों विकासालय के चार्ज में थे। वह जन उनके नाम एक पत्र लिखता है। उस पत्र में श्रीमान निर्मल सिंह जी को दिल खोलकर गालियां देता है। और उन पर यह अभियोग लगता है, कि आपने नीच गति, उच्च गति के झगड़ों में डालकर मेरी सारी सुख की दुनिया का अपहरण कर लिया है। कई प्रकार के पापों का डर देकर मुझे मौज बहार की जिन्दगी से मोड़ लिया। मैं अपनी विवाहिता पत्नी को छोड़कर दूसरी शादी करना चाहता था, ताकि गृहस्थाश्रम का सुख भोगूं। आपने मुझे दूसरी शादी नहीं करने दी। मैं आगामी काल में आपके धोखे में नहीं आना चाहता। अब मैं विकासालय छोड़कर अपने गांव को जा रहा हूँ इत्यादि।

पत्र पाते ही श्रीमान् निर्मल सिंह जी का हृदय गहरे दुःख से भर गया। उस आत्मिक रोगी को कोसने की बजाए वह उसके सम्बन्ध में कामनाएं करने लगे और उसकी तरसनाक अवस्था पर आंसू बहाते रहे। दो तीन दिन में धर्म विकासालय का अधिवेशन समाप्त होने पर वह उस आत्मिक रोगी के गांव की ओर चल दिए। आधी रात का समय था। वह उनके घर पर पहुँचे। वहां जाकर उसका दरवाजा खट - खटाया। वह सेवक नीचे उत्तर आया और यह देखकर कि श्रीमान जी आधी रात को उसके घर पहुँचे हैं, उसका कठोर हृदय पिघल गया। श्रीमान जी के बहुत सहानुभूतिपूर्ण बर्ताव से वह यहां तक प्रभावित हुआ कि वह श्रीमान् जी के साथ ऐसे सत्संग में जाने के लिए तैयार हो गया जो बहुत दूर स्थान में रखा हुआ था। इस प्रकार उस समय के मृत्युदायक हमले से वह बेशक बच गया। जो जन इस घटना से परिचित थे, वह देव प्रभावों के इस करिश्मे को देखकर देव प्रभावों के प्रति बहुत श्रद्धावान बन गए।

कोहारवाला श्रीमान् निर्मल सिंह जी का जन्म स्थान है। इस अपने जन्म स्थान में श्रीमान् निर्मल सिंह जी कई बार सत्संग ले गए थे। एक बार एक जबरदस्त पार्टी लेकर कोहारावाला पहुँचे। ज्योंही इस जबरदस्त पार्टी का पता कोहारावाला के अन्य निवासियों को लगा, त्योंही वहां के सिख जाटों ने मिलकर उसकी घोर विरोधिता शुरू कर दी। वहाँ के गांव के एक नौजवान नम्बरदार ने बहुत बढ़ - चढ़कर हिस्सा लिया और सब ने मिलकर यह प्रतिज्ञा की कि देव समाजियों के सत्संग में नहीं जाना। श्रीमान् निर्मल सिंह जी को यह खबर पहुँच चुकी थी। वह विरोधियों के ऐसे बनाए हुए किले को मिसमार करना चाहते थे। उनके पास एक ही साधन था। और वह भगवान देवात्मा के महाबली देव प्रभाव थे। उनको यह दृढ़ विश्वास था, कि ज्योंकि देव प्रभावों की गोलाबारी होगी, त्योंही इस किले की दीवारें हिलनी शुरू हो जाएंगी और यह सारा पाप का किला ढह कर मिसमार हो जाएगा। वह अपने एकान्त साधन में अपने सतगुरु

के चरणों में व्याकुल हृदय से उस नम्बरदार के भले के लिए कामनाएं करने लगे कि उसका हृदय बदले और उसका आत्मिक अन्धकार दूर हो। उसको देव ज्योति का दान मिले और वह अशुभ पथ से मुड़कर शुभ पथ का पथिक बन जाए। ऐसी प्रार्थना करते हुए वह कई बार फूट पड़े। आखिर कामनाओं और प्रार्थनाओं ने अपना नतीजा पैदा किया। उस नम्बरदार का दिल हिला। वह सत्संग में आने के लिए मजबूर हुआ और विरोधी अवस्था से निकल कर देव समाज का सतसंगी बन गया। देव प्रभावों का कैसा आश्चर्यजनक करिश्मा! और श्रीमान निर्मल सिंह जी के हृदय की कैसी विशेषता।

(4) विचित्र यात्रा की बुनियाद डालने वाले :

भगवान देवात्मा का जन्म स्थान श्री अकबरपुर ज़िला कानपुर में है। उस पवित्र भूमि की यात्रा के लिए कभी-कभी कोई सेवक जाते थे। लेकिन पार्टी बनाकर उसकी यात्रा के लिए कभी कोई सेवक दल नहीं गया। श्रीमान निर्मल सिंह जी भक्ति भाव से भरकर भक्ति भाजन सत्य देव का जन्म स्थान की यात्रा एक पार्टी बनाकर करना चाहते थे। यह उनका नया विचार था और नई उमंग थी। फिर उन्होंने रेल की बजाए लारी में सफर करना चाहा और लारियों को लाहौर से लेकर अकबरपुर तक ले जाना चाहा। ज्योंही उन्होंने अपने नए विचार को अमली जामा पहनाना शुरू किया, त्योंही कई जनों ने आकांक्षाएं प्रगट की कि हमें भी यात्रा पार्टी में शामिल किया जावे। पहली यात्रा पार्टी 1932 में तैयार हुई। और जितने यात्री तैयार हुए उनसे दो लारियां भर सकती थीं। यह दो लारियां लेकर श्रीमान निर्मल सिंह जी अपने भक्ति भाजन सत्यदेव के जन्म स्थान की यात्रा के लिए रवाना हुए। कई स्थानों में कीर्तन करते, व्याख्यान देते, भगवान देवात्मा का शुभ सम्वाद पहुंचाते, पुस्तकें बेचते अकबरपुर के पवित्र स्थान में पहुँचे। यात्रियों की उस समय की अवस्था ब्यान से बाहर है। वह पवित्र खुशियों से फूले नहीं समाते थे। जय ध्वनि करते थकते नहीं थे। उन्होंने नगर कीर्तन किया, जलसा किया, उच्च प्रभाव दायक भजनों की गूंज ने मंडल को उच्च असरों से भर दिया और भगवान देवात्मा और उनके अनोखे कार्य की महिमा के विषय में तकरीरें कीं। और अकबरपुर निवासी जनों को जागृत किया कि तुम कैसे सौभाग्यवान हो कि तुम उस पवित्र भूमि में रहते हो कि जहां आत्मिक जगत के सूर्य भगवान देवात्मा का आविर्भाव हुआ है। उसके पश्चात् यह यात्रा पार्टी प्रचार करती हुई कुशलपूर्वक पंजाब पहुँच गई।

फिर श्रीमान निर्मल सिंह जी की गहरी प्रेरणा से एक और यात्रा पार्टी 1934 में तैयार हुई। उस पार्टी के यात्री जन बहुत बड़ी संख्या में थे। इस बार दो लारियों के स्थान पर छः लारियां तैयार हुई। जब यह पार्टी हरिद्वार पहुँची, तब एक दुर्घटना हुई। श्रीमान निर्मल सिंह जी बेहोश होकर ज़मीन पर गिर पड़े और घंटों बेहोश रहे। एक-एक बार यह प्रतीत होता था कि वह बेहोशी में ही प्राण त्याग। देंगे। यह उनके दिमाग पर पहला हमला था। श्रीमान् निर्मल सिंह जी जब होश में आए, तब सब की यह सलाह हुई कि उनको वापिस पंजाब भेज दिया जाए। श्रीमान निर्मल सिंह जी ने कहा कि मैं यात्रा जरूर पूरी करना चाहता हूँ। यह इस नाजुक हालत में अकबरपुर पहुँचे। वहां पर जो पहली सभा की, उसमें श्रीमान् निर्मल सिंह जी ने जो गीत गाया, उसने उपस्थित जनों पर जादू का असर किया और कई यात्रियों ने यह अनुभव किया कि बहुत अच्छा हुआ, श्रीमान् निर्मल सिंह जी आ गए। यह यात्रा निर्विघ्न रूप से पूरी हुई। प्रचार भी बहुत हुआ। पुस्तकें भी अधिक संख्या में बिकीं, परन्तु श्रीमान् निर्मल सिंह जी की सेहत को बहुत हानि पहुँची। उनके भाव बहुत प्रबल थे, परन्तु शोक, उनका शरीर उनका साथ न दे सका।

श्रीमान साधु जानकी दास जी

श्रीमान साधु जानकी दास जी को हमारे प्राय: सब ही पाठकगण जानते हैं। मेरे और मेरे पारिवारिक जनों के वह विशेष उपकारी थे। मैं उनकी शूरवीरता के लिए हमेशा ही उनका श्रद्धावान रहा हूं। किसी अच्छे काम को हाथ में लेकर वह जिस प्रकार उसके लिए भेंट चढ़ जाते थे, और अपने कर्त्तव्य भाव से परिचालित होकर जिस सुन्दर से सुन्दर रूप में उसको पूरा करना चाहते थे, वह उनका ही काम था। वह सरल थे, वह भीतर और बाहर से एक थे। औरों से सेवा लेने के कभी आकांक्षी नहीं रहते थे। अगर किसी से वह कभी थोड़ी बहुत सेवा लेते थे, तो वह उसकी चार गुणा सेवा करके तृप्ति पाते थे। किसी जन ने यदि उन्हें रेल गाड़ी में थोड़ी सी मदद दी, तो उन्होंने जब तक उनके पास किसी चीज़ का पार्सल नहीं भेज दिया, तब तक चैन नहीं पाया। यूं ही किसी से दबने वाले नहीं थे, परन्तु यूं ही किसी से अड़ने वाले भी नहीं थे। जब अपनी गलती देखते थे, तो उस का परिशोध करने के लिए जितना अपने आपको कोसते और उत्पीड़ित जन के सम्बन्ध में जिस कदर क्षमा प्रार्थना के भावों से भर जाते थे, उसका हितकर दृश्य एक-एक समय में मेरे हृदय पर बहुत गहरा असर करता रहा है। श्रीमान साधु जी विशेष कर्मचारियों की मंडली में से एक विशेष कर्मचारी थे। उनके जीवन से कई ऐसे शुभकर कार्य हुए हैं, कि जिनकी बदौलत ही वह देव समाज के इतिहास में सदा ही विशेष रूप से स्मरण किए जाएंगे।

1. देव समाज स्वर्ण जुबिली महोत्सव के शानदार जलूस के शानदार जरनैल।

देव समाज के परम पूजनीय संस्थापक भगवान देवात्मा के 87 वें जन्म महोत्सव के उपलक्ष्य में जो वार्षिक महोत्सव हुआ था, उस शुभ अवसर पर देव समाज का स्वर्ण जुबिली उत्सव भी मनाया गया था। उस स्वर्ण जुबिली के उपलक्ष्य में पंजाब की राजधानी लाहौर में एक बहुत बड़े जलूस का प्रबन्ध कर्ता व नेता कौन हो? तब सब की निगाह जिस शूरबीर की तरफ गई, वह श्रीमान साधु जानकीदास दास जी थे। उन्होंने स्वयं यह पदवी चाहकर या मांगकर नहीं ली थी। लेकिन इस महोत्सव के प्रबन्धकर्त्ताओं ने ही इस बहुत कठिन और विशेष काम के लिए उनको नियत किया। उन्होंने तुरन्त इसको कामयाब बनाने के लिए असाधारण संग्राम करना शुरू कर दिया। श्री देव गुरु भगवान मेमोरियल मन्दिर (लाहौर) का जुबिली गेट उनके संग्रामों का एक बाह्यक चिन्ह है। कई तो उन्होंने बहुत सुन्दर बोर्ड बनवाए कि जो जुबिली महोत्सव और भगवान देवात्मा की अधिकारी दिलों पर विजय पाने की घोषणा करते थे। सारे जलूस के जिस भाग ने क्या सामाजिक जनों और क्या जनता के दिलों पर विशेष असर किया, वह जलूस का वह भाग था कि जहां पर एक शानदान फिटन में भगवान देवात्मा की निहायत सुन्दर छवि सुन्दर छत्र के नीचे सुन्दर फूलों के हारों से सुसज्जित की गई थी। फिटन जलूस के साथ चल रही थी। भगवान देवात्मा की छवि के दस Bodyguard थे, जो अपनी ज़रक-बरक पोशाक पहने हुए घोड़ों पर सवार होकर जा रहे थे। जलूस के जिस दूसरे भाग ने जनता और हमारे सामाजिक जनों पर खास असर किया, वह यह था, कि एक सजी हुई मोटर कार में विशेष सन्मान और श्रद्धा के योग्य श्रीमति माता पूजनीया जी

दो भद्र स्त्रियों सहित सवार थीं, और इस मोटरकार के पीछे कन्याओं और स्त्रियों की कतारें थी, जो बहुत मधुर स्वर में गीत गा रही थीं। इस जलूस के सम्बन्ध में हमारे साप्ताहिक पत्र 'सत्य देव संवाद' में निम्नलिखित पंक्तियां दर्ज हैं-

"यह जलूस जैसा शानदार था और जिस कदर खूबसूरत शक्ल को पेश करता था, और जिस आला दर्जे की बाकायदगी और प्रबन्ध के साथ जा रहा था, उसे देख-देखकर लोग हैरान रह जाते थे, और कितने ही जन, क्या स्त्री क्या पुरुष-जहां इस जलूस के द्वारा देव समाज की आश्चर्यजनक उन्नति को मालूम करके अपनी हैरानी का प्रकाश करते सुने गए, वहां वह उसके उच्च प्रभावों से भी बहुत प्रभावित होते देखे जाते थे। ऐसा भी देखने में आया, कि कई जन भगवान देवात्मा को छवि के द्वारा उनके अत्यन्त शक्तिशाली और उच्च प्रभावदायक रूप के दर्शन करके अपने सन्मान वा श्रद्धा के प्रकाश में झुककर प्रणाम करते थे।"

मैं स्वयं भी इस जूलस में शामिल था। जगह-जगह मैंने भी इस में तकरीरें की थीं। और मेरे हृदय में भी साधु जानकी दास जी के लिए श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुआ था।

2. भगवान देवात्मा के अनोखे सेक्रेट्री

मैं 20 जनवरी 1917 को सिन्ध त्याग कर लाहौर में भगवान देवात्मा के चरणों में पहुंच गया था। मैं अक्तूबर सन् 1924 से लेकर अप्रैल 1929 (जब भगवान देवात्मा परलोक को सिधारे) भगवान देवात्मा के चरणों रहा। सन् 1917 से लेकर सन् 1929 तक श्रीमान साधु जानकी दास जी मेरे सामने भगवान देवात्मा के सेक्रेट्री रहे। कई बार भगवान देवात्मा अपनी देव वाणी में प्रकाश करते, कि श्रीमान जानकी दास जी से पहले मुझे ऐसा कोई काबिल सेक्रेट्री नहीं मिला।

श्रीमान साधु जानकी दास जी एक टांग रखते थे। दूसरी लकड़ी की उनकी मसनूई टांग थी। मसनूई टांग रखने वाले जन जब सोते हैं, तो रात को उसको उतार कर रख लेते हैं, क्योंकि साथ लेकर सोने में विघ्न उत्पन्न होता है। परन्तु श्रीमान साधु जानकी दास जी जितने वर्ष और जितने वक्त भगवान देवात्मा के चरणों में रहे, उन्होंने केवल इस पवित्र विचार को सन्मुख रखकर रात को अपनी टांग कभी नहीं उतारी थी कि अगर भगवान देवात्मा कभी बुलाएं, तो उन तक पहुंचने में उनको देरी न हो। भगवान देवात्मा के साथ जब नहीं होते थे तो रात को टांग उतार देते थे। जब उनके साथ होते थे, तब कभी नहीं उतारते थे। क्या यह विचित्र घटना नहीं? क्या यह एक शिष्य का अपने गुरु के सम्बन्ध में त्याग का निराला दृष्टान्त नहीं? केवल इतना ही नहीं, किन्तु मैंने देखा है कि कई बार ऐसे समय भी आए, कि श्रीमान साधु जानकी दास जी को 104 डिग्री तक बुखार हो गया, परन्तु उन्होंने पूजनीय भगवान को इसका पता तक नहीं दिया, ताकि भगवान देवात्मा उन्हें लेटने को न कह दें और उनको अपने देवात्मा गुरु की सेवा के श्रेष्ठ अधिकार से वंचित न होना पड़े।

श्रीमान साधु जी इस बात के लिए बहुत खबरदार और फिकरमन्द रहते थे कि भगवान देवात्मा को किसी बात से अनुचित दुख और कष्ट न पहुंचे। एक बार भगवान देवात्मा श्रीमान साधु जानकी दास जी को सोलन अपने साथ नहीं ले गए थे। उन्हें लाहौर में आवश्यक काम का विचार करके छोड़ गए थे। और कामों के भिन्न साधु जी का यह काम भी था, कि वह भगवान देवात्मा के गरम कपड़ों को कभी-कभी निकाल कर हवा लगाते रहें, ताकि उन्हें कीड़ा न लग जाए। एक दिन जब श्री साधु जी ने भगवान देवात्मा

के गरम कपड़े बाहर निकाले, तब उन्हें मालूम हुआ, कि भगवान देवात्मा के गर्म चादरों के जोड़े को कीड़े ने हानि पहुंचाई है। साधु जी इस बात का बोध रखते थे कि भगवान देवात्मा को किसी की गफ़लत से किसी वस्तु का थोड़ा सा नुकसान भी बहुत तकलीफ देह मालूम होता था। वह जीवन दाता होकर हरेक सम्बन्धित वस्तु या अस्तित्व की आयु को बढ़ाना चाहते थे। विकास तत्व के पूर्ण बोधी और सहायक होकर वह प्रत्येक सम्बन्धित वस्तु या अस्तित्व का विकास ही चाहते थे। उसका विनाश बरदाशत नहीं कर सकते थे। भगवान देवात्मा को इस अनुचित दुःख से बचाने के निमित्त श्रीमान साधु जी ने अपने पैसों से गर्म चादरों का एक जोड़ा प्रायः उसी रंगत का खरीद कर वहां रख दिया और ऐसा करके ही तृप्ति लाभ की। ऐसी कई घटनाएं उनके जीवन से पैदा होती रहती थीं। वह सदा ही अपने सत्य देव भगवान देवात्मा की सच्ची प्रसन्नता लाभ करने और उन्हें अनुचित दुख से बचाने के लिए अपनी कुल शक्तियों और अपने कुल पैसों को न्योछावर करना अपना महा सौभाग्य और श्रेष्ठ अधिकार बोध करते थे।

मैंने कई बार श्री साधु जी को रात के बारह बजे तक दफ्तर में काम करते देखा है। वह इसलिए कि प्रातः काल भगवान देवात्मा की सेवा में किसी पुस्तक के प्रूफ और उनकी दी हुई अन्य आवश्यक हिदायतों को पूरा करके समय पर पेश कर सकें। अपने जीवन के लगातार इस दृष्टान्त से श्रीमान साधु जी ने भगवान देवात्मा के देव हृदय पर यह विश्वास बैठा दिया था कि श्रीमान् साधु जी के जिम्मे जो भी काम लगाया जाएगा वह सिवाए किसी विशेष कारण के अवश्य समय से पहले पूरा हो जाएगा। श्रीमान साधु जी के ऐसे बहुत परिश्रमी, कर्त्तव्य बोधी और विश्वास के पात्र जीवन को देखकर ही भगवान देवात्मा ने फरमाया था, कि पहली जंग (अर्थात् जो सन् 1914 से आरम्भ हुई थी) ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को प्रधान मन्त्री एसक्विथ की जरूरत नहीं थी, बल्कि लॉयडजार्ज की जरूरत थी। इसी तरह मुझे भी उस वक्त श्रीमान जानकी दास जी की जरूरत थी।

3. भगवान देवात्मा से सम्बन्धित चार पवित्र स्थानों के सौंदर्य और उनकी शोभा को बढ़ाना।

भगवान देवात्मा से सम्बन्धित चार स्थान ऐसे हैं जो निहायत ही पवित्र और पूजनीय हैं। अर्थात् (1) भगवान देवात्मा का जन्म स्थान श्री अकबरपुर (2) भगवान देवात्मा का अन्तिक निवास स्थान देवालय, लाहौर (3) भगवान देवात्मा की यादगार में उनके इस पृथ्वी में विराजमान होने के दिनों मैं लाहौर में जो श्री देव गुरु भगवान मेमोरियल मन्दिर बनाया गया था (4) पर्वताश्रम सोलन, जहां बरसों तक भगवान देवात्मा ने गर्मी के दिनों में बहुत सा नया और अद्वितीय साहित्य पैदा किया।

मैं सन् 1941 में गर्मियों की छुट्टियों के दिनों में पर्वताश्रम सोलन पहुंचा। मैंने पहली बार पर्वताश्रम के बाह्य रूप को देखकर बार-बार उस हस्ती अर्थात् श्रीमान साधु जानकी दास जी, को प्रणाम किया, कि जिन्होंने अपनी हिम्मत और बहुत कुर्बानी से उसकी काया पलट दी और उसे नया और सुन्दर रूप दे दिया। इसी मन्दिर के मैंने दो बहुत बड़े दरवाजे देखे, जो अत्यन्त शानदार हैं। एक दरवाजा सड़क पर है, दूसरा मन्दिर के साथ। पक्की सीढियां बनाई गई हैं और मन्दिर का बहुत बड़ा सेहन पक्का बना दिया गया है। सेहन में बहुत सी सुन्दर क्यारियां बना कर फूलदार पौधे और सरव के पौधे लगाए गए हैं जो अजीब किस्म की शोभा दे रहे हैं। बैठने वालों के लिए सुन्दर बैंच रखे गए हैं। बहुत से बाहर के स्त्री पुरुष हर साल दर्शन के लिए आते हैं। जो आता है, वह इस सुन्दर

स्थान के गुण गाता नहीं थकता। एक-एक जन का दिल इस स्थान को छोड़कर जाने को नहीं करता। मेरे एक मित्र रिटायर्ड डिपटी कमिश्नर कुछ दिनों के लिए मेरे पास आकर ठहरे। वह सन् 1930 में भी एक बार इस स्थान पर आकर ठहरे थे। ज्योंही उन्होंने वर्तमान मन्दिर का पक्का फर्श, नया बाग और सौंदर्य और शोभा को देखा, तो बेबस होकर कहने लगे कि मुबारिक हैं आप लोग कि जिन्होंने इस स्थान की शोभा और इसके सौंदर्य को इस कदर बढ़ा दिया है। मैंने उनको कहा, कि यह तो हमारे एक ही माननीय धर्म सम्बन्धी के परिश्रम और त्याग का फल है कि जिनका नाम श्रीमान साधु जानकी दास जी है। मुबारिक हैं साधु जानकी दास जी, जिन्होंने भगवान देवात्मा के निवास स्थान की इस कदर शोभा बढ़ा दी।

इसी प्रकार श्री देव गुरु भगवान मेमोरियल मन्दिर को बाह्यक रूप से सुन्दर और पवित्र बनाने वाले श्रीमान साधु जानकी दास जी हैं। भगवान देवात्मा के परलोक गमन करने के कई सालों बाद तक इस मन्दिर का बाह्यक रूप बहुत दुखप्रद रहा है। कर्मचारी निवास और मेमोरियल मन्दिर के बीच में जो सेहन था, उसक बुरा हाल था। स्त्री पुरुष और बच्चे वहीं बैठे रहते थे और छाबड़ी वाले वहां आते थे। उनसे चीज़ें लेकर और छिलके फेंक कर सेहन को कुत्सित के बनाते थे। सारा दिन चारपाईयां बिछी रहती थीं। बच्चों के छोटे कमोड पड़े रहते थे। श्रीमान साधु जानकी दास जी, जो 11 साल मुरादाबाद यू.पी. में रहे थे, जब लाहौर तशरीफ लाए तो उसको देखकर उनके दिल पर बहुत बड़ी चोट लगी। और उन्होंने इस अवस्था को बदलना चाहा। जानने वाले जानते हैं, कि उनको किन-किन मुसीबतों का सामना करना पड़ा। उन्होंने पहला सारा कुत्सित रूप बदल दिया। बहुत सुन्दर क्यारियां और घास के प्लाट बना दिए। सुन्दर फूल और फलदार वृक्षों का बाग लगवाया और सारे स्थान को नया, सुन्दर और पवित्र रूप दे दिया। एक बार एक बहुत बड़े हाई स्कूल के हैड मास्टर और ईश्वर परस्त सोसायटी के अच्छे-अच्छे जन मुझे मिलने के लिए आए। मैं श्रीमान साधु जी के बनाए हुए घास के प्लाट में बैठा हुआ था। वह बैठने के साथ ही कहने लगे के मैं कई वर्षों के बाद यहां पर आया हूं। यह जादू किसने करके दिखाया है। मैंने श्रीमान साधु जानकीदास जी का नाम लिया। वह कहने लगे तब तो उन्होंने आप लोगों की बहुत बड़ी सेवा की है। इसी प्रकार भगवान देवात्मा के निवास स्थान देवालय और समाधि को नया रंग और रूप देने में श्री साधु जी ने असाधारण संग्राम किया। जगह-जगह फिर कर इस कार्य के लिए सैकड़ों और हजारों रुपए दान में लाए।

भगवान देवात्मा का जन्म स्थान अकबरपुर जिला कानपुर में है। भगवान देवात्मा के सैंकड़ों सेवकों ने इस पवित्र स्थान के दर्शक भी नहीं किए। इस पवित्र स्थान को नया और सुन्दर रूप देने का दर्द किस के भीतर पैदा हुआ? बार-बार श्री अकबरपुर पहुंच कर वहां मन्दिर बनाने और छोटा सा बाग लगाने में किस ने संग्राम किया? वहां कुआं किस ने लगवाया? बार-बार वहां जाकर उसकी देखभाल और जरूरी मरम्मत किस ने कराई? श्रीमान साधु जानकी दास जी ने। श्रीमान साधु जानकी दास जी ने इस अनोखी सेवा से क्या इस वक्त के सामाजिक जनों और क्या आने वाली नसलों पर जो उपकार किया है, उस उपकार का सच्चा फल उनको हमेशा मिलता रहेगा। और सारी देव समाज उनकी इस स्मरणीय सेवा को सामने लाकर उनको धन्यवाद देती रहेगी।

4. एक असाधारण हमदर्द हस्ती

मैं एक बार मुरादाबाद गया था। श्री साधु जी के पास जाकर ठहरा था। मेरा खाने का प्रबन्ध श्री

साधु जी ने एक सेवक के घर पर किया था, जिनका नाम श्रीमान भगवान दीन जी था। वह बहुत अच्छे सेवक थे। श्री साधु जी की संगत से बहुत लाभ उठाते थे। उन्होंने मेरी भी बहुत अच्छे भावों से सेवा की थी। वह रेलवे के मुलाजिम थे और अच्छी तन्खाह पाते थे। मैं मुरादाबाद से चला आया। कुछ समय के बाद मुझे पता लगा कि शोक! ऐसे सेवक का देहान्त हो गया है। इस अकाल मृत्यु से एक नौजवान लड़की विधवा हो गई और छोटे-छोटे बच्चे यतीम हो गए। इस बात को सामने लाकर श्री साधु जी ने बड़ा सदमा खाया कि इस हालत में इस नौजवान विधवा और इतने छोटे बच्चों का क्या हाल होगा। उनका हृदय हिल गया। उन्होंने रेलवे वालों से मिलना और पत्र व्यवहार करना शुरू किया। और महीनों तक उसका सिलसिला जारी रहा। और फिर जो उनके Bonus के पैसे मिलते थे, वह किस प्रकार से उन बच्चों के नाम रहें, उसके फिकर और संग्राम में भी उन्हें कई जगह जाना और विविध लोगों से मिलना पड़ा। उसी विधवा और उसके बच्चों को लेकर वह मोगे पहुंचे, क्योंकि वह जानते थे, कि देव समाज के रक्षाकारी किले में ही इस विधवा की इज्जत सलामत है, छोटे बच्चों की रक्षा और पालना का सामान है। और उनके रुपयों की हिफाजत है। बरसों तक इस परिवार की रक्षा का काम जारी रखा। इस तरह यह परिवार अपने पावों पर खड़ा होने के योग्य बन गया। उजड़े घरों को बसाने वाले भगवान देवात्मा के शिष्य होकर श्री साधु जी उजड़े घर बसाने वाले हो गए। इनकी हस्ती कैसी मुबारिक!!

श्रीमान बख्शी रतन चन्द जी जौहर सेक्रेटरी देव समाज, को कौन नहीं जानता? सन् 1936 में उन्हें अचानक एक पांव में सख्त तकलीफ शुरू हो गई। इत्तफाक से इस अवसर पर श्री साधु जी सोलन तशरीफ ले आए। उनकी बढ़ती हुई तकलीफ को देख कर श्री साधु जी को यही सूझा कि शिमले के योग्य डाक्टरों का परामर्श लेना चाहिए। फौरन ही यह असाधारण साहस रखने वाले हमारे प्रिय सम्बन्धी श्री साधु जी श्रीमान बख्शी जी को उठाकर शिमले ले गए। जब शिमले के डाक्टरों ने यह कहा कि शायद टांग काटनी पड़े तब श्री साधु जी ने यही ठीक समझा कि पंजाब की राजधानी लाहौर में जो सबसे बड़ा हस्पताल है, जहां सब से ज्यादा बेहतर मदद मिल सकती है, वहां ले जाना चाहिए। वह श्रीमान बख्शी जी को बहुत बड़ी सावधानी से लाहौर ले आए और महीनों तक उनकी जान को बचाने के संग्राम में रात दिन एक कर दिया। आखिरकार उनके असाधारण संग्राम का यह फल हुआ, कि श्री बख्शी जी की कीमती जान बच गई। औरों की रक्षा, पालना और सेवा में जिस कदर साधु जी अपने आपको भूल जाते थे, वह दृश्य भी असाधारण है। इसी प्रकार मुरादाबाद के सेवक साहू बैद्यनाथ थे। वह एक बार सख्त बीमार हो गए। उनके यह सौभाग्य थे कि श्री साधु जी उनके पास थे। श्री साधु जी ने उनकी जो सेवा की, वह स्मरणीय थी। उनको उठाकर वह मेरठ ले गए। योग्य डाक्टरों से मिलकर उनका इलाज कराया। उनका पेशाब पखाना उठाया। उनकी सेवा में रात दिन एक कर दिया। अचम्भे में डालने वाली बात यह थी कि श्री साधु जी खाते अपना थे और सेवा उनकी करते थे। साहू बैजनाथ जी ने कई बार रोकर उनसे कहा कि खाया तो आप मेरे साथ करें, लेकिन श्री साधु जी ने नहीं माना। और निष्काम सेवा का दृष्टान्त हम सब के सामने पेश किया। इस प्रकार के कई दृष्टान्त श्री साधु जी के जीवन से उत्पन्न हुए हैं। श्री साधु जी का जीवन कैसा हमदर्द और कैसा मुबारिक!!

श्रीमान डाक्टर एच. वी. सोनपार

1. असाधारण सात्विक प्रकृति

मेरी डाक्टर हासानन्द सोनपार से जानकारी 1898 में हुई थी जब वह गवर्नमैन्ट हाई स्कूल में पढ़ते थे। मैं उनसे ऊपर की क्लास में पढ़ता था। हमारी आपस में कोई मित्रता नहीं थी। वह बहुत अच्छे गायक थे इसलिए स्कूल में उन्हें सब जानते थे और इस रूप में मैं भी जानता था। हमारी मित्रता 1902 में बढ़ी जब हम दोनों ने ही गायकबाड़ बड़ौदा कालेज में पढ़ना शुरू किया। कालेज की छुट्टियों में वह एक दिन मेरे घर आए और मुझे घर में ना पाया। उन्हें पता लगा कि मैं देव समाज के महान कर्मचारी श्रीमान भाई मोहनदेव जी के पास मिलने गया हूं। उन्होंने इच्छा प्रकट की कि मैं उन्हें उनके पास ले जाऊं। मैं उन्हें उनके पास ले गया और पहली ही संगत से डाक्टर सोनापारजी का सारा जीवन बदल गया। वह बहुत मांसाहारी थे। दिन में चार-पांच बार मांस का भोजन सेवन करते थे। उन्होंने भाई मोहन देव जी के कहने पर मांस सेवन छोड़ने का प्रण किया और सारे जीवन में इस प्रण को निभाया।

श्रीमान डाक्टर सोनापारजी के परिवर्तन पर हमारे शहर में हल चल मच गई। वह चोटी के परिवार से सम्बन्ध रखते थे। स्वभावत: ही उनके परिवार के साथ शहर के बड़े-बड़े लोग सम्बन्धित थे। कुछ समय के लिए इनका परिवर्तन उच्च कोटि के समाज में बातचीत का विषय बना रहा। उन्हें प्रसिद्ध बुजुर्गों के पास ले जाया गया ताकि वह उन्हें देव समाज छुड़वाने का प्रयत्न करें। परन्तु ज्यों-ज्यों उनका विरोध ज्यादा हुआ डाक्टर सोनपार जी का देव समाज के साथ लगाव बढ़ता गया। वह फरवरी 1904 में देव समाज के सेवक बन गए। उसी वर्ष वह पूजनीय भगवान देवात्मा के दर्शनों के लिए लाहौर आए। भगवान के दर्शन करने से उनके सात्विक हृदय पर जादू का असर हुआ। दुनिया की शानोशौकत अर्थरहित हो गई। दुनियां के सुख और सामान फीके पड़ गए। भगवान के कार्य में लग जाने में ही उन्होंने अपने जीवन की सफलता देखी। उन्होंने उसी समय संकल्प किया कि वह बी. ए. पास करके अपना जीवन भेंट करेंगे। यह संकल्प उनकी बिरादरी और विशेष कर उनके परिवार के लिए असहनीय आघात था। बिरादरी और परिवार ने पूरा संग्राम किया कि डाक्टर सोनापार जी को इस संकल्प से हटा दें। परन्तु डाक्टर सोनापार जी एक विशेष प्राकृति लेकर पैदा हुए थे। उनकी सात्विक प्रकृति ने देव प्रभावों द्वारा बल और विकास पाकर इनको अपने संकल्प पर सच्चा रखा। 1905 में बी. ए. का इम्तिहान समाप्त करते ही वह भगवान देवात्मा के दरबार में पहुंच गए। भगवान ने उन्हें देव समाज स्कूल मोगा में अध्यापक नियुक्त करके देव समाज की सेवा का अवसर दिया। दुर्भाग्य से वह बी. ए. में फेल हो गए। वह इम्तिहान पास करने के लिए वापस चले गए। इम्तिहान पास करने के बाद उन्हें गवर्नमैण्ट की नौकरी 90 रू० पर मिल गई और 1909 तक उन्होंने यह नौकरी की। परन्तु वह खुश न थे-क्योंकि वह देव समाज में परोपकार का जीवन बिताने के इच्छुक थे। जब उन्होंने भगवान को अपनी इच्छा प्रगट की कि वह उनके दरबार में ही काम आना चाहते हैं तो भगवान ने 30 रु० वेतन पर मोगा स्कूल में काम करने की आज्ञा दी। डाक्टर सोनपार जी ने खुशी-खुशी यह त्याग का जीवन स्वीकार किया। दो तीन वर्ष बाद उन्हें भगवान देवात्मा ने अपना कर्मचारी बनने का शुभ अवसर दिया।

2. कठिनाईयों के समय के सूरमा

डाक्टर सोनपार जी ने जीवन में कई विशेष गुण विकसित किए। उनमें से एक विशेष गुण यह था कि वह

बहुत बहादुर थे। कठिनाईयों के समय के सूरमा था। देव समाज की संस्थाओं पर जब-जब आकस्मिक विपत्ति आती थी तो डाक्टर सोनपार जी को संस्था का मुख्य अध्यापक करके भेजा जाता था। श्रीमान लाला गंगाराम जी देव समाज स्कूल मोगा के प्रसिद्ध हैडमास्टर थे। उनका शहर में बहुत अच्छा रसूख था। उन्होंने हैडमास्टर के पद से त्याग पत्र दे दिया। वह देव समाज के लिए मुसीबत का वक्त था और देव समाज का मोगा स्कूल, देव समाज की दो मुख्य संस्थाओं में से एक स्कूल था। मोगे में ऐसे लोग थे जो इस परिस्थिति का फायदा उठाकर उसे हानि पहुंचाना चाहते थे। स्कूल के इस संकट के समय में भगवान देवात्मा ने डाक्टर सोनपार जी को स्कूल की बागडोर सौंपी। उन्होंने स्कूल को ऐसी सफलता से चलाया कि लोग श्रीमान गंगाराम जी को भूल गए। स्कूल के दुश्मनों को मुँह की खानी पड़ी। डाक्टर सोनपार जी के साहस, वीरता और उत्साह ने दुश्मन के मनसूबों को असफल कर दिया।

इसी प्रकार 1915 में देव समाज गर्ल्ज स्कूल फिरोजपुर पर मुसीबत आई। यह देव समाज की दूसरी मुख्य संस्था थी। इस स्कूल के हैडमास्टर बहुत सफल हैडमास्टर थे और लोकप्रिय थे। वह देव समाज स्कूल छोड़कर चले गए। इस संकट के समय भी भगवान देवात्मा ने डाक्टर सोनपार जी को नया हैडमास्टर बनाकर भेजा। उन्होंने अपने साहस और काबलियत से इस संस्था को केवल हानि ही नहीं होने दी परन्तु इस का नाम और भी ऊंचा किया।

1917 में देव समाज ने लाहौर में दीवान हासामल देव समाज स्कूल खोला। उस समय जितने लोग देव समाज की संस्थाओं में काम करते थे उनमें से भगवान देवात्मा ने डाक्टर सोनपार जी को ही नई संस्था का हैडमास्टर नियुक्त किया। लाहौर में बड़े-बड़े स्कूल थे और प्रसिद्ध स्कूल थे। वहां देव समाज के स्कूल के लिए नाम पैदा करना बहुत कठिन काम था और इसके लिए असाधारण काबलियत और वीरता का हैडमास्ट चाहिए था। और वह गुण डाक्टर सोनपार में थे। उनमें इन्तजामिया या संचालक योग्यता असाधारण थी। उनमें (Resourcefulness) सूझबूझ बहुत थी। उनका हृदय सूरवीर का हृदय था। आठ वर्ष तक उन्होंने इस संस्था को चलाया और बढ़ाया। उसके बाद समाज ने उन्हें किसी दूसरे काम पर लगा दिया।

कुछ वर्ष बाद लाहौर देव समाज स्कूल पर भी मुसीबत के दिन आ गए तब देव समाज कौन्सिल ने फिर डाक्टर सोनपार जी को इस स्कूल का चार्ज सौंपा। उन्होंने करामात कर दिखाई। डूबती हुई नैया को किनारे पर ले आए। हम सब कौन्सलरज ने ऐसी असाधारण सेवा के लिए उनकी बेअखत्यार सराहना की। संक्षेप में जब भी देव समाज की संस्थाओं पर आपत्ति या Emergency आ पड़ती कि जिसमें संचालक योग्यता, सूझ-बूझ और साहस वा वीरता की असाधारण जरूरत होती थी तो डाक्टर सोनपार जी को ही वह सौंप दी जाती थी। इनकी वीरता और साहस की आखिरी और प्रमुख परीक्षा तब हुई जब देश का बंटवारा हुआ। देव समाज का हैड ऑफिस लाहौर था। देव समाज की सम्पति, पुस्तकालय और विशेषकर देवालय वहीं पर थे। देश के बटवारे के समय देव समाज के छोटे बड़े सब लोग लाहौर से आ गए। डाक्टर सोनपार जी ही अकेले सेवक थे जो वहां पर डटे रहे। वह उस समय देव समाज के मुख्य संचालकों में से न थे इसलिए उनपर संचालकों की कोई जिम्मेदारी न थी। केवल देव समाज के ही लोग देव समाज छोड़कर नहीं गए, इर्द-गिर्द के सब लोग छोड़कर चले गए थे। डाक्टर सोनपार जी ही अकेले श्री देव गुरु भगवान मेमोरियल मन्दिर में रहते रहे। यद्यपि मन्दिर में सब तरफ मुसलमान ही मुसलमान थे जिनमें से कोई भी किसी वक्त छुरा मार कर उनकी हत्या कर सकता था। ऐसे भयानक हालात में भी वह सूरमा साबित हुए। उनका यह संकल्प था कि वह मन्दिर छोड़कर नहीं जावेंगे। जब तक उन्हें पाकिस्तान सरकार जबरदस्ती बाहर न निकाल दे। वह अपने संकल्प पर सच्चे रहे और जान पर जोखों और खतरों

को खुशी खुशी बरदाश्त किया। जब पाकिस्तान पुलिस ने उन्हें मन्दिर से निकाल दिया तब ही वह हिन्दुस्तान आए।

3. कुछ मोह बन्धनों से वैराग

भगवान देवात्मा के चरणों में रह कर डाक्टर सोनपार जी ने कई सद्‌गुण विकसित किए थे जिनसे उनका जीवन सुन्दर बन गया। वह बच्चों के मोह बन्धन से ऊपर थे। उनके दो पुत्र थे। उनका इन्होंने अच्छा लालन-पालन किया। पढ़ाया लिखाया और अपने पैरों पर उन्हें खड़ा किया। ऐसी सेवा से वह उनके मोही न बने। नेचर ने उनके इस सद्‌गुण की परीक्षा ली। उनमें से एक लड़का बहुत अच्छी डीलडौल वाला नौजवान अवस्था में टाईफाईड में ग्रस्त हो गया। डाक्टर सोनपार जी देव समाज के काम पर सिन्ध गए हुए थे। उन्हें उनके लड़के की बीमारी की खबर दी गई। परन्तु वह अपना काम छोड़ कर लाहौर नहीं आए। अपने हितकारियों को अपने लड़के के लिए लिखते रहे और बाकायदा उसकी खबर रखते रहे।

दुर्भाग्य से उनके लड़के की हालत खराब हो गई। परन्तु तब भी डाक्टर सोनपार जी अपना समाज का काम छोड़ कर न आए। उनकी अनुपस्थिति में उनके लड़के की मृत्यु हो गई। उन्हें बहुत दुःख हुआ - ऐसा दुःख बड़े-बड़े को जड़ से उखाड कर फेंक देता है। उनका वैराग्य एक बड़ के पेड़ के समान प्रमाणित हुआ और वह इस दुख की बाढ़ में भी कायम रहा। उन्होंने देव समाज के काम में अपने दुख को भुलाया।

केवल बच्चों के सम्बन्ध में ही वह निर्मोही न थे। वह पैसे, पोज़ीशन और शक्ति के भी मोही न थे। उनके अन्तिम दिनों की एक घटना विशेष है। भगवान देवात्मा की अन्तिम शिक्षा के अनुसार "कि प्रचार विभाग में काम करने वालों को वेतन नहीं लेना चाहिए" समाज से अपना वेतन लेना छोड़ दिया। इस त्याग के कारण उन्हें कई बार भूखा भी रहना पड़ा जो उनके वृद्ध शरीर के लिए बहुत कष्टदायक था। उन्होंने भूखा रहना पसन्द किया परन्तु किसी से सहायता की प्रार्थना न की। वास्तव में बहुत सारे सामाजिक जनों को उनके ऐसे त्याग का ज्ञान तक भी न था। उनकी जल्दी मृत्यु का एक कारण यह भी था कि उनके शरीर को काफी खुराक नहीं मिलती थी। परन्तु उन्होंने अपने इस कदम पर कभी अफसोस नहीं किया।

शक्ति के मोह से भी वह निर्मोही थे। उन्हें कई बार शक्तिपूर्ण पद दिए गए। मैं पहले बता चुका हूँ कि किस प्रकार उन्हें समाज की संस्थाओं को बचाने का कठिन काम दिया जाता था और वह किस सफलता से नैया को किनारे पर लगाते थे। और फिर उन्हें उस संस्था से अलग कर दिया जाता था। समाज के उन्हें कई अधिकार देकर वापिस लिए गए। कई ऐसे समयों पर वह ऐसे वंचन को अन्याय मूलक समझते थे, परन्तु ऐसे अन्यायों से वह समाज के कार्य की सेवा में ढीले नहीं पड़े।

4. भगवान देवात्मा के सम्बन्ध में पूर्ण विश्वास

श्रीमान डाक्टर सोनपार जी का भगवान देवात्मा के प्रति पूर्ण विश्वास था और उनके लिए अटल वफादारी थी। वह अपना प्रान्त, अपनी बिरादरी और अपने दुनियवी भविष्य को ऐन जवानी की उमर में त्याग करके भगवान देवात्मा के चरणों में आ गए। उन्होंने देव समाज की संस्थाओं की नाजुक अवस्थाओं में स्मरणीय सेवा की। तब भी ऐसी घटनाएं हुई जिनमें बड़ी से बड़ी आत्मा के पैर उखड़ जाते हैं। वह 1909 से 1925 तक स्कूलों में हैडमास्टर या मुख्याध्यापक रहे। 1925 में भगवान देवात्मा ने उन्हें संस्थाओं से अलग कर दिया और सब पद छीन लिए। डाक्टर सोनपार जी ने बिना किसी दिक्कत के अपने पद छोड़ दिए। उन्हें पूरा विश्वास था कि भगवान कोई ऐसा कदम नहीं उठावेंगे जो सत्य और शुभ की माँग न हो। जब उन्हें भगवान का आदेश सुनाया गया तो उन्होंने बेअखत्यार कहा कि "भगवान का कहना ठीक है।" मैंने उनसे पूछा कि "अब आप क्या करेंगे? क्या आप सिन्ध वापिस चले जावेंगे?" उन्होंने हँस कर उत्तर दिया, "एक सिपाही

कभी भी पीठ नहीं दिखाता। वह लड़ कर मरना ही जानता है। मैंने अपना जीवन भगवान को अर्पित किया था वह आज भी अर्पित है। मैंने उसे सुधारना है ताकि वह फिर से भगवान की खुशी का कारण बने।" उन्होंने पहला स्मरणीय कदम यह उठाया कि समाज और भगवान की आज्ञा ली कि वह दान एकत्र करें। वह आज्ञा पाकर बम्बई में दान एकत्र करने चले गए। और यह काम बहुत सफलता से किया। फिर वह लाहौर वापिस आए और कुछ समय समाज की एक संस्था में बिना पैसे के काम किया। वह अब स्कूल के कानून के अनुसार स्कूल में काम नहीं कर सकते थे। वह भगवान के पास लाहौर में रहना चाहते थे। उन्होंने अपने निर्वाह के लिए होम्योपैथी में शिक्षा पाई और होम्योपैथी की दुकान खोली। समाज के सब पदों से अलग किए जाने पर भी, और इसलिए समाज का कोई अंग न रह कर भी, वह कर्मचारियों के समान भगवान देवात्मा के चरणों में अधिक से अधिक रहने के इच्छुक रहे।

भगवान देवात्मा के साथ वफादारी, देवसमाज के साथ वफादारी है। देव समाज के साथ वफादारी का एक लक्षण यह है कि उसका सभासद उसके शासन को स्वीकार करे। एक दुर्घटना के कारण उन्हें कर्मचारी के पद से हटा दिया गया। उन्होंने एक जनरल की नाई अपनी एकाकारी उतार कर अपने ट्रंक के तले में रख दी और वह उस घड़ी की इन्तजार में रहे कि कब उन्हें फिर एकाकारी पहनने का अधिकार मिलेगा। वह इस वक्त दिल्ली में थे और यह देश के बंटवारे का समय था। उन्हें यह भी कहा गया कि आप देव समाज साधन-स्थान छोड़ कर चले जायें। उन्होंने कौन्सिल को उत्तर दिया कि मैं आपकी आज्ञा पूरी करूँगा। उन्हें कुछ दिन मकान ढूँढने के लिए दिए गए। उन दिनों में मकान मिलना लगभग असम्भव था। उस समय देव समाज के अन्य जनों को कौन्सिल का ऐसा आदेश कठोर अनुभव हुआ। डाक्टर सोनपार जी भला इस वृद्ध और निर्धन अवस्था में कहां जा सकते थे? लेकिन डाक्टर सोनपार जी ने इस आदेश की पूर्ति के लिए इधर-उधर मकान ढूँढना शुरू किया। मकान ढूँढने के दिनों में वह बीमार हो गए और एक हस्पताल के जनरल वार्ड में दाखिल हो गए। वहां उनकी दशा बिगड़ती चली गई, इसलिए वहां से उन्हें वापिस देव समाज के मकान में लाया गया जहां उन्होंने अपने प्राण दिए।

नोट :- श्रद्धेय श्रीमान कनल जी ने डाक्टर सोनपार जी के देहान्त के पश्चात तीन लेख लिखे जो जनवरी और फरवरी 1949 और अगस्त 1951 में सांइस ग्राउण्ड रिलिज्यन में छपे थे। इन तीनों में से ऐसे भागों का रचनात्मक या स्वतन्त्र अनुवाद ऐसे ढंग से किया गया है ताकि वह सेवक माला के लेखों की तरतीब और शैली के अनुसार हो।

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए। (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन। प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, # 68, Shop No. 3, Badheri 41-D, Chandigarh*** *से छपवाकर म. न. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

Book Posts